न्यायालय, राजस्व परिषद, उत्तराखण्ड़, देहरादून।

द्वितीय अपील संख्या–58 / 2012–13

अन्तर्गत धारा–331 भू0रा0अधि0

1– आदित्य सिंह, 2. कुशलपाल सिंह, 3. उदय सिंह, 4. शिशुपाल सिंह पुत्रगण स्व0 यशपाल सिंह, 5. श्रीमती मुन्नी देवी पत्नी स्व0 यशपाल सिंह, निवासी–ग्राम ककनावा मयचक, तलाई, पो0ओ0 थानो, परगना परवादून, जिला देहरादून।

बनाम

1– मीर हसन पुत्र अली हसन(मृतक) , 1/1 यासीन, 1/2. हाशिम पुत्रगण स्व0 मीर हसन, 1/3. श्रीमती जैतून पत्नी स्व0 मीर हसन, 2. जान मौहम्मद, 3. शब्बीर अहमद, 4. हबीब अहमद पुत्रगण अली हसन, सभी निवासीगण–ग्राम कण्डोल, पो0ओ0 थानो, परगना परवादून, जिला देहरादून, 5. ग्राम सभा कोटी द्वारा ग्राम प्रधान।

उपस्थित	:	श्री पी0एस0जंगपांगी, सदस्य(न्यायिक)।
अधिवक्ता अपीलकर्तागण	:	श्री कुशलपाल सिंह।
अधिवक्ता उत्तरदातागण 1 से 4	:	श्री प्रेमचन्द्र शर्मा।

निर्णय

विभाजन के वाद से उपजी यह द्वितीय अपील अपीलकर्तागण द्वारा मूल वाद संख्या–22/1984–85–मीर हसन बनाम जान मौहम्मद आदि–में पारित निर्णय व प्रारम्भिक आज्ञप्ति दिनांक 14–09–1999 के विरूद्ध प्रस्तुत अपील संख्या–43/1999–2000–मीर हसन बनाम यशपाल सिंह व अन्य– में पारित निर्णय व आज्ञप्ति दिनांक 11–10–2012 के विरूद्ध मुख्य रूप से इन आधारों पर प्रस्तुत की गई है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय व आज्ञप्ति साक्ष्य एवं विधि के विपरीत है, कि आक्षेपित निर्णय व आज्ञप्ति द्वारा परीक्षण न्यायालय के निर्णय व आज्ञप्ति दिनांक 28–02–1987 की पुष्टि की गई है जबकि यह निर्णय एवं आज्ञप्ति दिनांक 19–09–1995 को प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अपास्त की जा चुकी थी तदनुसार प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपील का निस्तारण स्वतंत्र विवेचन व विश्लेषण से नही किया है जिससे उसका निर्णय व आज्ञप्ति विधि की दृष्टि में शून्य है।

इस द्वितीय अपील की संक्षिप्त पृष्ठभूमि इस प्रकार है:–

वादी/उत्तरदाता मीर हसन ने एक विभाजन का वाद अन्तर्गत धारा–176 जं0वि0अधि0 बावत भूमि खाता नं0 2 खसरा नं0 99 क्षेत्रफल 1.73 एकड़ (जिसे बाद में सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी/परगनाधिकारी, देहरादून के आदेश दिनांक 27–11–1984 से 0.01 एकड़ भूमि आबादी घोषित किये जाने के फलस्वरूप न्यायालय के आदेश दिनांक

10–01–1985 से 1.72 एकड़ किया गया) नया खसरा नं0 269, 270, 271, 272 एवं 273 कुल क्षेत्रफल 0.700 है0 स्थित ग्राम कोटिमय चक, परगना परवादून, जिला देहरादून दिनांक 14–05–1984 को सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी/परगनाधिकारी, देहरादून के समक्ष प्रस्तुत किया जिसमें वादग्रस्त भूमि के मूल खातेदार फकीरा पुत्र मुस्सू व ईतवारू पुत्र धौलू का आधा हिस्सा होने का कथन प्रस्तुत कर एवं वादी द्वारा ईतवारू पुत्र शंकर सिंह से उसके हिस्से की सम्पूर्ण भूमि क्रय किये एवं प्रतिवादी यशपाल सिंह द्वारा वादी के दो भाईयों अली मौहम्मद व मेहन्दी हसन की हिस्से की भूमि क्रय कर लिये जाने के आधार पर वादी स्वयं का 13/24 हिस्सा पृथक किये जाने की प्रार्थना की गई। प्रतिवादी यशपाल सिंह की ओर से प्रतिवाद पत्र प्रस्तुत किया गया जिसमें वादपत्र के प्रमुख अभिवचनों का खण्डन करते हुए वादग्रस्त भूमि के सहखातेदारों की वंशावली इस प्रकार व्यक्त की गई कि वादग्रस्त भूमि के मूल खातेदार फकीरा, मुस्सू व ईतवारू थे जिनमें से फकीरा व मुस्सू सगे भाई थे एवं मुस्सू निःसंतान मरा जिसकी भूमि वादी व उसके दो भाईयों को उत्तराधिकार से प्राप्त हुई। वादी ने ईतवारू के पुत्र से उसके हिस्से की 1/3 भूमि क्रय की जबकि स्वयं प्रतिवादी ने वादी के भाई मेहन्दी हसन व अली मौहम्मद के हिस्से की भूमि क्रय की। तद्नुसार उसका वादग्रस्त भूमि में 4/9 हिस्सा है। प्रतिवाद पत्र में भी यह कहा गया कि वादग्रस्त भूमि का स्थल पर पारिवारिक बंटवारा हो चुका है एवं सभी पक्षकार अपनी–अपनी सहखातेदारी की भूमि पर काबिज है तथापि प्रतिवादी अपने 4/9 हिस्से का कुर्रा बनवाना चाहता है जिस हेतु वह न्याय शुल्क अदा कर रहा है।

वाद के निस्तारण हेतु निम्न दो विवाद्यक बनाये गयेः–

1– पक्षकारों का वादग्रस्त भूमि में कितना–कितना हिस्सा है?

2– क्या वादग्रस्त भूमि में भूमि के किसी अंश में कोई आबादी है? अथवा उसके किसी अंश का उपयोग अकृषक हो रहा है?

वाद बिन्दु संख्या–2 का निस्तारण सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी/परगनाधिकारी, देहरादून के आदेश दिनांक 27–11–1984 से इस आशय किया गया कि वादग्रस्त भूमि मे से 0.01 एकड़ में आबादी बनी हुई है तद्नुसार उसका क्षेत्रफल घटाकर वादपत्र संशोधित किया जाए। विद्वान सहायक कलेक्टर ने दिनांक 28–02–1987 को वाद आज्ञप्त किया जिसके विरूद्ध प्रथम अपील आयुक्त, गढ़वाल मण्डल, पौड़ी के समक्ष प्रस्तुत की गई जिसे विद्वान अपर आयुक्त, गढ़वाल मण्डल ने अपने निर्णयादेश दिनांक 19–09–1995 से स्वीकार कर एवं आक्षेपित निर्णय व आज्ञप्ति अपास्त कर वाद कतिपय निर्देशों के साथ प्रति प्रेषित किया। वाद प्रति प्रेषण के उपरान्त पुनः सुनवाई कर विद्वान सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी/परगनाधिकारी, मसूरी ने वाद दिनांक 14–12–1999 को निम्नवत निर्णीत किया।

" विवादित भूमि ख0नं0 269/0–180 है0, 270/0–165 है0, 271/0–015 है0, 272/0–010 है0, 273/0–330 है0 कुल रकबा 0–700 है0 स्थित ग्राम कोटिमय चक, परगना परवादून की भूमि में वादी का 7/18 भाग प्रतिवादी संख्या–1 से 3 प्रत्येक का 1/18, 1/18

भाग तथा प्रतिवादी संख्या–4 का 4/9 भाग घोषित किया जाता है। तद्नुसार प्रारम्भिक डिक्री तैयार की जाए।''

सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी/परगनाधिकारी, मसूरी के निर्णय व प्रारम्भिक आज्ञप्ति दिनांक 14–12–1999/07–02–2000 के विरूद्ध पुनः प्रथम अपील योजित की गई जिसमें विद्वान अपर आयुक्त ने अपने निर्णयादेश दिनांक 11–10–2012 के द्वारा बन्दोबस्ती खतौनी 1344 फसली की प्रविष्टियों पर विश्वास व्यक्त करते हुए एवं विद्वान सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी/परगनाधिकारी, देहरादून द्वारा पारित निर्णयादेश दिनांक 28–02–1987 में किये गये विवेचन व विश्लेषण को तात्विक एवं विधिक रूप से सही पाते हुए उसकी पुष्टि की जिसके विरूद्ध यह वर्तमान द्वितीय अपील प्रस्तुत की गई।

मैंने उभयपक्षों के विद्वान अधिवक्ता की बहस को दिनांक 18–05–2016, 29–09–2016 एवं अन्ततः 01–05–2017 को विस्तृत रूप से सुना एवं पत्रावलियों का भली भांति अध्ययन किया। यंहा यह भी अंकित करना समीचीन है कि परीक्षण न्यायालय की पत्रावली पर प्रस्तुत राजस्व अभिलेखों की साक्ष्य में वरीयता एवं महत्व पर विद्वान अधिवक्तागण के साथ कई चरणों में मंथन भी किया गया।

यद्यपि इस अपील में विधि के निम्न सारवान प्रश्नों का उल्लेख किया गया है परन्तु अपेक्षित रूप से उनका विरचन नही किया गया:–

1– क्या प्रथम अपीलीय न्यायालय ने प्रश्नगत निर्णय पारित करते समय मौखिक साक्ष्यों की कोई विवेचना की है?

2– क्या प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किये गये अभिलेखीय साक्ष्यों की गलत विवेचना की है?

3– क्या प्रथम अपीलीय न्यायालय को निर्णय व डिक्री दिनांक 28–02–1987 की पुष्टि करने का क्षेत्राधिकार था जो प्रथम अपीलीय न्यायालय ने पूर्व में अपने आदेश दिनांक 19–09–1995 के द्वारा निरस्त कर दी थी?

आलोच्य वाद खाते के विभाजन से सम्बन्धित होने के दृष्टिगत मात्र एक ही विधि का सारवान प्रश्न कि ''क्या आक्षेपित निर्णय व आज्ञप्ति के द्वारा सम्बन्धित पक्षकारों का वादग्रस्त भूमि में अंश साक्ष्य एवं विधिसम्मत रूप से निर्धारित किया गया?'' ही महत्वपूर्ण एवं निर्णायक है। शेष सारे बिन्दु/अभिवाक व तर्क इसी प्रश्न के निर्धारण में सहायक है।

विधि के सारवान प्रश्न के विरचन की अनिवार्यता के सम्बन्ध में अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि धारा–331 ज0वि0अधि0 अन्तर्गत प्रस्तुत द्वितीय अपील में संशोधित धारा–100 सी0पी0सी0 का विधि का सारवान प्रश्न सम्बन्धी प्राविधान लागू नही होता है अपितु इस धारा के संशोधन से पूर्व का प्राविधान लागू होता है एवं उनका यह भी तर्क है कि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने सी0पी0सी0 के आदेश-IXL नियम 31 के प्राविधान के अनुसार अपील के निस्तारण हेतु न तो निर्धारक बिन्दुओं पर व्याख्या की न उनपर निर्णय अंकित किया न कोई स्वतंत्र विवेचन व विश्लेषण किया। दूसरी ओर उत्तरदाता संख्या–1 से 4 के विद्वान

अधिवक्ता का तर्क है कि द्वितीय अपील में विधि के सारवान प्रश्नों का निस्तारण आवश्यक है जिसके अभाव में द्वितीय अपील वर्जित है। इस सम्बन्ध में दोंनो विद्वान अधिवक्ता ने अपने–अपने तर्कों के समर्थन में कतिपय न्याय व्यवस्थाएं प्रस्तुत की है।

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने जंहा एक ओर मा0 सर्वोच्च न्यायालय की उत्तराखण्ड राज्य बनाम मोहन सिंह व अन्य, ए0आई0आर0 2013 सुप्रीम कोर्ट 38, में प्रतिपादित न्याय सिद्धान्त कि '' धारा–331 (4) के अन्तर्गत राजस्व परिषद के समक्ष प्रस्तुत द्वितीय अपील के आधार धारा–100 सी0पी0सी0 के संशोधन से पूर्व के आधारों तक ही सीमित होंगे। तद्नुसार ऐसी अपील विधिक प्रश्नों पर आधारित होगी जो सारवान विधिक प्रश्न हो आवश्यक नही क्योंकि धारा–331 (4) समामेलन द्वारा विधान का उदाहरण (instance of legislation by incorporation) है'' एवं मा0 उत्तरांचल उच्च न्यायालय की बैकुण्ठनाथ कौशिक बनाम आनन्द स्वरूप कौशिक, 2007 (1) यू0सी0 615, में प्रतिपादित न्याय सिद्धान्त कि ''धारा–100 सी0पी0सी0 के संशोधित प्राविधान मात्र धारा–341 जं0वि0अधि0 पर लागू होंगे न कि इस अधिनियम की धारा–331(4) पर का'' उल्लेख किया है। दूसरी ओर उत्तरदाता संख्या–1 से 4 के विद्वान अधिवक्ता ने मा0 उच्च न्यायालय, उत्तराखण्ड की नरेन्द्र सिंह बनाम मेघराज व अन्य में पारित निर्णय दिनांक 12–03–2013 की न्याय व्यवस्था कि ''द्वितीय अपील में विधि के सारवान प्रश्न का विरचन न किया जाना प्रकट विधिक त्रुटि है'' मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद की घनश्याम व अन्य बनाम राजस्व परिषद व अन्य 2010 (109) आर0डी0 530 में प्रतिपादित समान न्यायिक सिद्धान्त एवं मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद की चन्द्रमोहन व एक अन्य बनाम श्रीमती चन्द्रा देवी 2010 (110) आर0डी0 258 कि ''धारा–100 सी0पी0सी0 के अधीन विधि के सारवान प्रश्नों के अवयव विद्यमान नही अतः अपील कोई हस्तक्षेप वांछित न होने के आधार पर अस्वीकृत'' का सहारा अपने तर्कों के समर्थन में लिया है।

मा0 सर्वोच्च न्यायालय की पूर्व में उद्धरित 2013 की न्यायिक व्यवस्था नवीनतम एवं अंतिम होने के दृष्टिगत भू–राजस्व अधिनियम की धारा–331 के अधीन विचाराधीन द्वितीय अपील में विधि के सारवान प्रश्नों का आधार होना एवं उनका विरचन आवश्यक नही है तथापि विधि के प्रश्नों का विद्यमान होना आवश्यक है क्योंकि वर्तमान प्रकरण में सम्बन्धित पक्षकारों का विवादित भूमि में अंश साक्ष्य से समर्थित है अथवा नहीं अन्तर्विष्ट है। इसी क्रम में मा0 उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय की पूर्व में उद्धरित 2007 की न्याय व्यवस्था खण्डपीठ द्वारा प्रतिपादित होने के दृष्टिगत इसी न्यायालय की 2013 की व्यवस्था वर्तमान प्रकरण में लागू नही होती है। तद्नुसार वर्तमान अपील में विधि के सारवान प्रश्न विरचित न होने मात्र से इसके अग्राह्य होने का कोई प्रश्न नही है तथापि द्वितीय अपील में एवं विद्वान अधिवक्ता के द्वारा प्रस्तुत तर्कों में इंगित सभी विधिक प्रश्न, भले वे सारवान हो अथवा अन्यथा, को देखा जा रहा है एवं उनका विवेचन और विश्लेषण कर उसपर निष्कर्ष व निर्णय अंकित किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्तागण द्वारा उद्धरित उत्तर प्रदेश राज्य व

अन्य बनाम शांति देवी व अन्य, 2013 (120) आर0डी0 494, में प्रतिपादित विधिक सिद्धान्त कि "द्वितीय अपील उस स्थिति में अनुमन्य है जब संगत साक्ष्य पर विचार नही किया गया है अथवा अग्राह्य साक्ष्य पर विचार किया गया है ऐसी स्थिति में द्वितीय अपील में तथ्य सम्बन्धी निष्कर्षों में हस्तक्षेप किया जा सकता है", वर्तमान द्वितीय अपील में प्रासंगिक है। इस क्रम में विद्वान अधिवक्ता के द्वारा मा0 सर्वोच्च न्यायालय की, भारतीय स्टेट बैंक व अन्य बनाम एस0एन0 गोयल, ए0आई0आर0 2008 सुप्रीम कोर्ट 2594, में प्रतिपादित सिद्धान्त कि "विधि का ऐसा प्रश्न जो मामले के अंतिम निर्णय को प्रभावित करता हो भी विधि का सारवान प्रश्न है एवं पहले से निर्णीत प्रश्न भी कतिपय स्थितियों में सारवान प्रश्न हो सकता है", भी इस वर्तमान द्वितीय अपील में प्रासंगिक है क्योंकि वर्तमान मामले में किस साक्ष्य को अवर न्यायालय द्वारा महत्व दिया गया है एवं किस साक्ष्य को वास्तव में महत्व दिया जाना चाहिए अर्थात् क्या एक साक्ष्य दूसरे साक्ष्य की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है का बिन्दु अन्तर्विष्ट है। इस सम्बन्ध में विद्वान अधिवक्ता के द्वारा उद्धरित मा0 इलाहाबाद, उच्च न्यायालय की, रामभरोसे लाल व एक अन्य बनाम तुलाराम व अन्य, 2009 (106) आर0डी0 58, में प्रतिपादित विधिक सिद्धान्त कि "where a document of title has been misinterpreted, misconstrued or even misread, it involves a substaintial question of law or at least a question of law", भी वर्तमान द्वितीय अपील में अति प्रासंगिक है क्योंकि आलोच्य मामले में स्वत्व के अभिलेखों की तुलनात्मक व्याख्या एवं उनका महत्व का ही प्रश्न अन्तर्विष्ट है।

दूसरा महत्वपूर्ण बिन्दु यह है कि विद्वान अपर आयुक्त ने अपने आक्षेपित निर्णय व आज्ञप्ति से परीक्षण न्यायालय की अपास्त निर्णय व आज्ञप्ति दिनांक 28-02-1987 की पुष्टि किया जाना विधिसम्मत है अथवा नही? जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि परीक्षण न्यायालय द्वारा दिनांक 28-02-1987 को पारित निर्णय व आज्ञप्ति को प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अपने निर्णयादेश दिनांक 19-09-1995 के द्वारा अपास्त कर दिया गया था तद्नुसार परीक्षण न्यायालय के उक्त निर्णय व आज्ञप्ति की पुष्टि किये जाने का क्षेत्राधिकार पुनः प्रथम अपीलीय न्यायालय को नही था क्योंकि प्रथम अपीलीय न्यायालय को अपने ही निर्णय को पुनर्विलोकित (review) करने की शक्ति नही प्राप्त है। इसके अतिरिक्त प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष उसके अपने निर्णयादेश दिनांक 19-09-1995 के पुनर्विलोकन हेतु कोई प्रकरण नही प्रस्तुत हुआ था। विद्वान अपर आयुक्त के समक्ष एक नयी प्रथम अपील प्रस्तुत हुई थी जिसपर स्वतत्रं विश्लेषण, विवेचन व विनिश्चयन किया जाना चाहिए था। तद्नुसार यह स्पष्ट है कि विद्वान अपर आयुक्त को अपने आक्षेपित निर्णयादेश के द्वारा पूर्व में उनके पूर्वाधिकारी द्वारा अपास्त की गई निर्णय व आज्ञप्ति को पुष्ट करने की शक्ति व क्षेत्राधिकार नही प्राप्त था। उन्होंने तद्नुसार क्षेत्राधिकार से परे जाकर अपास्त आज्ञप्ति की पुष्टि की है।

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह भी तर्क है कि आक्षेपित प्रथम अपीलीय निर्णय व आज्ञप्ति में कोई स्वतंत्र निष्कर्ष नही अंकित किया गया है एवं अपील में अवधारक

बिन्दुओं (points for determination) पर कोई विनिश्चयन व निष्कर्ष नही दिया गया है तद्नुसार आक्षेपित निर्णय व आज्ञप्ति विधि की दृष्टि में शून्य है। इसके प्रत्युत्तर में उत्तरदातागण के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि प्रथम अपील एवं यंहा तक कि द्वितीय अपील में भी एक ही बिन्दु अन्तर्विष्ट है जो खातेदारों/उभयपक्ष के विवादित भूमि में अंश सम्बन्धी है जिसका उचित विनिश्चयन अवर अपीलीय न्यायालय ने किया है। इस पर मेरा ध्यान प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णयादेश दिनांक 11–10–2012 की ओर जाता है जिसमे विद्वान अपर आयुक्त ने परीक्षण न्यायालय में प्रस्तुत अभिलेखीय साक्ष्य का तुलनात्मक विश्लेषण किया है एवं यह पाया है कि वर्ष 1344 की खतौनी बन्दोबस्त पूर्व की खतौनी होने के दृष्टिगत अभिलेखीय साक्ष्य में सबसे अधिक विश्वसनीय है। इसके अतिरिक्त उन्होंने फकीरा वल्द मुस्सू के स्थान पर फकीरा व मुस्सू के नाम के अंकन को ''सम्भवतः लिपिकीय त्रुटि'' माना है। इस सम्बन्ध में मेरा यह मत है कि वे परीक्षण न्यायालय के पूर्व निर्णय व आज्ञप्ति दिनांक 28–02–1987 के विश्लेषण, विवेचन व निष्कर्ष के तौर तरीकों से सहमत तो हो सकते थे अथवा उन्हें अंगीकृत कर सकते थे एवं प्रथम अपील में आक्षेपित निर्णय व आज्ञप्ति को अपास्त कर सकते थे। परीक्षण न्यायालय के निर्णय व आज्ञप्ति दिनांक 28–02–1987 के विवेचन व विश्लेषण के सिद्धान्तों/तौर तरीकों को अंगीकृत करने में कोई अनियमितता नही थी परन्तु अनियमितता मात्र यह है कि उन्होंने अपास्त निर्णय व आज्ञप्ति को पुष्ट किया जो वे, जैसा कि पूर्व में अवधारित किया जा चुका है, नही कर सकते थे। विद्वान अपर आयुक्त ने प्रथम अपील में अन्तर्विष्ट एक ही अति महत्वपूर्ण प्रश्न कि पक्षकारों/सहखातेदारों का विवादित भूमि में कितना–कितना अंश है एवं उसका क्या आधार व साक्ष्य है के सम्बन्ध में,संक्षिप्त ही सही, स्वतंत्र विश्लेषण व विवेचन भी किया है एवं निष्कर्ष भी अंकित किया है। तद्नुसार मैं अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क से कि विद्वान अपर आयुक्त ने अवधारक बिन्दुओं पर अभिमत/निष्कर्ष नही दिया है फलतः उनका निर्णयादेश विधितः शून्य है से सहमत नही हूँ।

कुल मिलाकर मैं आलोच्य वाद एवं उसके क्रम में इस द्वितीय अपील में एक ही प्रश्न कि:– प्रत्येक सहखातेदार/पक्षकार का वादग्रस्त भूमि में क्या अंश है एवं क्या उसका आधार व साक्ष्य विधितः मान्य है?–ही महत्वपूर्ण है। अपीलकर्तागण/प्रतिवादी संख्या–4 वर्ष 1356 फसली, 1359 फसली एवं उसके पश्चात की खतौनियों पर अपना विश्वास व्यक्त करते है। 1356 फसली की खतौनी, कागज संख्या–23/12, मे खसरा नं0 99 क्षेत्रफल 1.73 एकड़ में मालिकान के रूप में सुमेरचन्द मुन्दर्जा खेवट नं0 (1) अंकित है एवं जम्मन 8 ''आराजी जिसपर आसामी मौरूसी काबिज हो'' के अन्तर्गत फकीरा व मुस्सू पिसरान नत्थु कौम धोबी सा0 कंडोगल व ईतवारू वल्द धयालू कौम लुहार सा0 रामनगर डांडा के नाम अंकित है एवं खतौनी 1359 फसली, कागज नं0–23/11, जम्मन 8 में भी यही स्थिति है। अन्तर मात्र इतना है कि फकीरा के स्थान पर उसके पुत्रगण अली हुसैन, मेहन्दी हुसैन एवं अली मौहम्मद के नाम अंकित हो गये है। 1360–1361 फसली की खतौनी, कागज संख्या–23/13, में 1359

फसली में अंकित खातेदार सीरदार के रूप मे अभिलिखित है। ऐसा जमींदारी विनाश की प्रक्रिया सम्पन्न होने के दृष्टिगत स्वाभाविक एवं विधिक रूप से हुआ है। उसके पश्चात 1362 फसली, 1363 फसली कागज संख्या–23/14, कागज संख्या–23/15, 1366 से 1368 फसली, कागज संख्या–23/16, 1370 से 1372 फसली कागज संख्या–23/17 में भी यही स्थिति बनी रही। 1376 से 1378 की खतौनी, कागज संख्या–23/18, में ईतवारू के स्थान पर शंकर सिंह का नाम अंकित हुआ एवं अमलदरामद के स्तम्भ में मुस्सू पुत्र नत्थू को मृतक दर्शाकर उसके स्थान पर अली हसन व अली मौहम्मद एवं मेहन्दी हसन के नाम दिनांक 29–06–1971 को अंकित किये गये। इसी खतौनी में दिनांक 15–02–1972 की एक प्रविष्टि निहित लगान जमा कर भूमिधरी किये जाने सम्बन्धी भी अंकित है एवं दिनांक 14–12–1972 की प्रविष्टि से मूल प्रतिवादी यशपाल सिंह के नाम विक्रय से नामान्तरित किये जाने का भी उल्लेख है। इसके अतिरिक्त प्रतिवादी संख्या– 4 की ओर से अली मौहम्मद व मेहन्दी हसन पुत्र फकीरा, वादी के भाई, के द्वारा मूल प्रतिवादी यशपाल सिंह के पक्ष में किये गये पंजीकृत विक्रय पत्र दिनांक 12–07–1971/13–07–1971 कागज संख्या–23/3 – 23/7 भी प्रस्तुत किया गया है जिसमें विक्रेता ने वादग्रस्त भूमि में अपना 4/9 हिस्सा होने का उल्लेख किया है। उनके द्वारा वादी/उत्तरदाता के परगनाधिकारी, देहरादून के न्यायालय में मुकद्मा नं0–99/72 यशपाल बनाम अली मौहम्मद ने अंकित मौखिक परीक्षण दिनांक 10–03–1972 की प्रमाणित प्रति कागज संख्या–23/27 भी प्रस्तुत की गई है जिसमें प्रति परीक्षण में उसने कहा है कि "भाईयों का 2/3 भाग मानता हूँ।"

दूसरी ओर वादी की ओर से खसरा बन्दोबस्त 1344 फसली कागज संख्या–25/2, खतौनी 1344 फसली, कागज संख्या–25/4, फर्द मुताबकत, 1345 कागज संख्या–25/3 एवं खतौनी 1345 फसली, कागज संख्या–56/2, की प्रमाणित प्रतियां प्रस्तुत की गई जिनमें से खतौनियों की जिम्मन 8 की प्रविष्टि–फकीर वल्द मुस्सू कौम धोबी सा0 कण्डोगल व ईतवारू वल्द द्योलू कौम डोम सा0 रामनगर डांडा अंकित है। इसके अतिरिक्त एक पंजीकृत विक्रय पत्र, कागज संख्या–17/3 – 17/6, जो कि शंकर सिंह पुत्र ईतवारू सिंह ने वादग्रस्त भूमि में 1/2 अंश दर्शाते हुए मूल वादी मीर हसन पुत्र अली हसन पक्ष में दिनांक 20–07–1976 को किया है भी प्रस्तुत हुआ है।

यंहा यह स्पष्ट किया जाना आवश्यक है कि आलोच्य वाद विभाजन का वाद है न कि स्वत्व का। विभाजन के वाद में सहखातेदारों की सहमति से उनके अंश घोषित हो सकते है अन्यथा इस सम्बन्ध में प्रस्तुत नवीनतम खतौनियों की प्रविष्टियों का आशय अन्यथा होने के लिए साक्ष्य आवश्यक होंगे। आलोच्य प्रकरण में जंहा विद्वान सहायक कलेक्टर ने 1356 फसली, 1359 फसली एवं उसके पश्चात के खतौनियों की प्रविष्टि पर विश्वास व्यक्त किया है वंही प्रतिवादी के साक्षी डी0 डबल्यू–4 बुद्धू सिंह पुत्र मुस्सू सिंह के साक्ष्य परीक्षण को भी विश्वसनीय माना है। इसके अतिरिक्त उन्होंने 1376 से 1378 फसली के आकार पत्र प क 11 पर मुस्सू पुत्र नत्थू के उत्तराधिकार की प्रविष्टि पर भी विश्वास व्यक्त किया है। जिसके

अनुसार उन्होंने वादग्रस्त भूमि के मूल में तीन सहखातेदार माने है। इसी आधार पर वादी का वादग्रस्त भूमि में 7/18 अंश प्रतिवादी संख्या–1 से 3 प्रत्येक का 1/18 अंश एवं प्रतिवादी संख्या–4 का 4/9 अंश घोषित किया है जबकि विद्वान अपर आयुक्त ने अपने आक्षेपित निर्णय व आज्ञप्ति के द्वारा 1344 फसली की बन्दोबस्त पूर्व खतौनी सबसे अधिक विश्वसनीय होने के आधार पर वादग्रस्त भूमि के मूल में दो ही सहखातेदार होना माना है।

अभिलेखों की उक्त स्थिति के दृष्टिगत प्रश्न यह है कि क्या 1344 फसली व 1345 फसली की खतौनियों की प्रविष्टियां 1356 फसली व 1359 फसली एवं उसके पश्चात की खतौनियों पर प्रभावी (override) होगी या 1356 फसली एवं उसके पश्चात की खतौनियों की प्रतिलिपियां 1344 व 1345 फसली की खतौनियों की प्रविष्टियों को प्रभावी (override) होगी ? निःसंदेह 1344 फसली की खतौनी जिसे कि विद्वान अपर आयुक्त ने बन्दोबस्त की पूर्व की खतौनी मानकर सबसे अधिक विश्वसनीय माना है एक महत्वपूर्ण अभिलेख है परन्तु 1356 फसली एवं 1359 फसली की खतौनी भी कम महत्वपूर्ण नही है क्योंकि इन दोनो खतौनियां तत्कालीन उत्तर प्रदेश में एक क्रान्तिकारी भूमि सुधार विधि अधिनियमित व क्रियान्वित किये जाने के दृष्टिगत पूर्ण परीक्षण कर बनायी गई है एवं इन प्रविष्टियों की उपेक्षा यूं ही नही की जा सकती है। आधार खतौनियों से मध्यवर्तियों के अधीन कृषक/काश्तकारों की स्थिति निरूपित की गई है तत्पश्चात मध्यवर्तियों के हितों को सरकार में निहित कर उनके अधीन निहित श्रेणियों व वर्गो के काश्तकारों/कृषकों को विधिवत भौमिक अधिकार प्रदान किये गये। तद्नुसार जमींदारी विनाश की क्रांतिकारी प्रक्रिया के उपरान्त बनी खतौनी 1360 फसली की प्रविष्टि भी अति महत्वपूर्ण हो जाती है। इन तीनों खतौनियों में फकीरा व मुस्सू को भाई दिखाया गया जिनकी वल्दियत मुस्सू अंकित है। प्रश्न यह है कि किस खतौनी को किस दूसरी खतौनी का सुधार व संशोधन/शुद्धि (correction) माना जायेगा? मेरा यह निश्चित मत है कि अनुवर्ती/पश्चातवर्ती को पूर्ववर्ती अभिलेखों का संशोधन माना जायेगा। आलोच्य प्रकरण में 1356 फसली, 1359 फसली एवं 1360 फसली में खातेदारों की स्थिति में विक्रय व उत्तराधिकार से हुए परिवर्तनों के अतिरिक्त खातेदारों की स्थिति यथावत रही है। इसके दृष्टिगत निश्चित रूप से यह खतौनियां 1344 व 1345 फसली की खतौनियों का संशोधित रूप है न कि विपरीत (vice versa) । तद्नुसार विद्वान अपर आयुक्त का एतद्सम्बन्धी निष्कर्ष स्थिर रहने योग्य नही है। यही नही 1376–1378 फसली में मुस्सू पुत्र नत्थू की मृत्यु के आधार पर दिनांक 29–06–1971 को अंकित अविवादित उत्तराधिकार सम्बन्धी प्रविष्टि भी उक्त स्थिति की पुष्टि ही करती है। यंहा तक कि वादी अली हसन का परगनाधिकारी, देहरादून के समक्ष पूर्व में उल्लिखित मुकदमा नं0–99/72 में हुए प्रति परीक्षण में अभिलिखित कथन कि "वह भाईयों का 2/3 हिस्सा मानता है" भी उक्त स्थिति की पुष्टि करता है। क्या वादी/अपीलकर्तागण अपने आचरण से विवंधित नहीं हैं ? मेरा मानना है कि वे विभाजन के वाद में उक्त अभिलेखीय स्थिति से अन्यथा कथन करने विवंधित हैं। तद्नुसार यह स्पष्ट है कि वादग्रस्त भूमि के मूल खातेदार तीन व्यक्ति फकीरा, मुस्सू पुत्रगण नत्थू व ईतवारू पुत्र

द्योलू थे। इस सम्बन्ध में विद्वान सहायक कलेक्टर, प्रथम श्रेणी, मसूरी का विवेचन व विश्लेषण साक्ष्य एवं विधिसम्मत है जबकि विद्वान अपर आयुक्त का विश्लेषण व विवेचन उपर्युक्त विमर्श के आलोक में स्थिर रहने योग्य नही है। इस सम्बन्ध में उत्तरदाता संख्या–1 से 4 के विद्वान अधिवक्ता का तर्क कि 1356 फसली खतौनी में कांट छांट हुई है का प्रश्न है यदि ऐसा होता तो 1359–1360 फसली में 1356 फसली में उसकी स्थिति दोहराई नही जाती। वैसे भी 1356 फसली की स्थितियां अनुवर्तीय वर्षों में निरन्तरण चली आ रही हैं। यदि 1356 फसली में कोई त्रुटि हुई है तो प्रश्न यह उठता है कि वादी/अपीलकर्तागण द्वारा अब तक उसके आधार पर चली आ रही कथित त्रुटि का निवारण क्यों नहीं कराया ? अथवा क्या विभाजन के वाद में कथित त्रुटि को शुद्व किया जा सकता है ? विद्वान अधिवक्ता का बन्दोबस्ती खतौनियाँ 1344 व 1345 फसली के सम्बन्ध में धारा 44 भू–राजस्व अधिनियम सम्बन्धी धारणा/उपधारणा सम्बन्धी तर्क का जहां तक प्रश्न है यह धारणा/उपधारणा 1359 फ़सली की क्रान्तिकारी भूमि विधि के क्रियान्वयन के फलस्वरूप बनाई गई खतौनी के सम्बन्ध में भी होती है। इस सम्बन्ध में अपीलकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद की, जय नारायण सिंह व अन्य बनाम उप संचालक, चकबन्दी व अन्य, 2014 (124) आर0डी0 724 में प्रतिपादित विधिक व्यवस्था कि 1356 फसली खसरा खतौनी की प्रविष्टियों का विशेष महत्व है एवं लम्बी अवधि की सत्त रूप से विद्यमान एवं चुनौती नही दी गई राजस्व अभिलेखों की प्रविष्टियों पर एक लम्बी अवधि के उपरान्त प्रश्न नही उठाया जा सकता है, भी वर्तमान प्रकरण में अति प्रासंगिक है क्योंकि वादी/उत्तरदातागण द्वारा 1356 फसली से अब तक विद्यमान पूर्व विश्लेषित खतौनियों की प्रविष्टियों को कभी भी चुनौती नही दी गई है तद्नुसार वे उन्हें विभाजन के बाद में चुनौती नही दे सकते है अथवा उनकी शुद्धता पर प्रश्न नही उठा सकते है। उनके पास स्वत्व सम्बन्धी वाद अथवा अभिलेख दुरूस्ती का पर्याप्त अवसर उपलब्ध था जिसका उन्होंने उपयोग नही किया है। इसी आशय की एक न्यायिक व्यवस्था मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद, लक्ष्मण सिंह व अन्य बनाम गजराज सिंह, 2011 (113) आर0डी0 579 में प्रतिपादित की है जिसमें 1356 व 1359 फसली वर्षों को अति महत्वपूर्ण बन्दोबस्ती वर्ष माना है, भी वर्तमान प्रकरण में प्रासंगिक है।

जंहा तक उत्तरदाता संख्या–1 से 4 के विद्वान अधिवक्ता के तर्क कि दो अधीनस्थ न्यायालयों के तथ्य सम्बन्धी समवर्ती निष्कर्ष को परिवर्तित नही किया जा सकता है का प्रश्न है आलोच्य प्रकरध में दोंनो अधीनस्थ न्यायालयों के तथ्य सम्बन्धी समवर्ती निष्कर्ष अन्तर्निहित नही है क्योंकि 1987 की निर्णय व आज्ञप्ति अपास्त हो चुकी थी एवं 1999 में वादग्रस्त भूमि के मूल तीन खातेदार होने के आधार पर निर्णीत किया गया था जिसे प्रथम अपील में अपास्त किया गया। इस सम्बन्ध में उत्तरदातागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा मा0 उच्च न्यायालय, इलाहाबाद द्वारा, निसार अहमद व अन्य बनाम नन्हू ख़ान, 1990 आर0डी0 पृष्ठ 457, चन्द्रमोहन व एक अन्य बनाम श्रीमती चन्द्रा देवी, 2010 (110) आर0डी0 258 एवं मा0 सर्वोच्च न्यायालय की, अजरत बीवी व एक अन्य बनाम चिन्नाथम्बी, 2010 (109) आर0डी0

484, में प्रतिपादित न्यायिक सिद्धान्त कि दो अवर न्यायालयों के समवर्ती निर्णय किसी विधि व तथ्य की त्रुटि से ग्रसित न हो तो उन्हें उल्टा/पल्टा नही जा सकता अथवा दो अवर न्यायालयों के तथ्य सम्बन्धी समवर्ती निष्कर्ष को द्वितीय अपील में पल्टा नही जा सकता, का जंहा तक प्रश्न है, चूंकि वर्तमान द्वितीय अपील में, जैसा कि पूर्व में उल्लिखित किया जा चुका है दो अवर न्यायालयों के तथ्य सम्बन्धी समवर्ती निष्कर्ष का प्रश्न अन्तर्विष्ट नही है क्योंकि परीक्षण न्यायालय ने वाद वादपत्र पत्र में अंकित आधारों पर आज्ञप्त नही किया है जबकि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने वादपत्र में अंकित आधारों पर प्रथम अपील स्वीकार कर परीक्षण न्यायालय के निर्णय व आज्ञप्ति को अपास्त किया है अर्थात दोनों के अभिमत/निष्कर्ष भिन्न–भिन्न हैं।

पूर्व में अंकित विस्तृत विवेचन व विश्लेषण के दृष्टिगत प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय व आज्ञप्ति साक्ष्य एवं विधिसम्मत नही है। उक्त स्थिति में उनका निर्णय विपर्यस्त है। इस स्थिति मैं उत्तरदाता संख्या–1 से 4 के विद्वान अधिवक्ता के एतद्सम्बन्धी तर्क से सहमत नही हूँ।

उपर्युक्त के दृष्टिगत द्वितीय अपील स्वीकार होने योग्य है।

आदेश

द्वितीय अपील स्वीकार कर प्रथम अपीलीय न्यायालय का निर्णय व आज्ञप्ति दिनांक 11–10–2012 अपास्त किये जाते है। इस न्यायालय की पत्रावली संचित तथा अधीनस्थ न्यायालयों की पत्रावलियाँ वापस की जाएं।

(पी0एस0जंगपांगी)
सदस्य(न्यायिक)

आज दिनांक **15–05–2017** को खुले न्यायालय में उद्घोषित, हस्ताक्षरित एवं दिनांकित।

(पी0एस0जंगपांगी)
सदस्य(न्यायिक)